International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493
Received: 29-10-2021, Accepted: 15-11-2021, Published: 30-11-2021
Volume 3, Issue 4, 2021, Page No. 22-23

अशोक के फूल निबंध में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का सांस्कृतिक चिंतन

डॉ. सन्तोष कुमार पाण्डेय
सहायक आचार्य, वीरभूमि राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महोबा, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
भारतीय साहित्य में अशोक का प्रवेश उसी तरह से होता है जैसे कोई नववधू अपने ससुराल आती है। जैसे नववधू के आने से घर में खुशियों की लहर दौड़ जाती है, वैसे ही एक जमाना था जब अशोक के फूलों को देखकर लोग वैसी ही खुशी का अनुभव करते थे। कालीदास ने अपने साहित्य में इसे बहुत सम्मान के साथ याद किया है। सुंदरियां इन फूलों को कानों में झुमके की तरह पहनती थी। जब अशोक के लाल–लाल फूल सुंदरियों के गालों पर लटकते और हिलते–डुलते तो उनकी सुंदरता कई गुना बढ़ जाती थी। राजघरानों की रानियां एक उत्सव मनाती थी जिसमें वह नूपुर पहनकर अशोक के पेड़ के निचले तने को अपने पैरों से हल्की–हल्की चोट पहुंचाती थी। माना जाता था कि इससे अशोक के पेड़ में सुंदर फूल आयेंगे। सुंदरियां अबीर, कुंकुम, चंदन और अशोक के फूलों से कामदेव की पूजा करती थी। यह अशोक का फूल भगवान शिव के मन में क्षोभ पैदा करता है। प्रभु श्रीरामचंद्र के मन में सीता का भ्रम पैदा करता है और कामदेव के एक इशारे पर लोगों के जीवन में मधुरता का संचार करने के लिए चल पड़ता है। बौद्ध साहित्य में भी अशोक का उल्लेख मिलता है। रामायण में रावण ने सीता जी को अशोक वाटिका में ही रखा था। इस तरह देखते हम देखते हैं कि अशोक वृक्ष और उसके पुष्पों से जुड़ी एक समृद्ध सांस्कृतिक परंपरा भारत में मौजूद थी लेकिन आज अशोक को उस सिंहासन से उतार दिया गया है।

मूल शब्दः अशोक, हजारीप्रसाद द्विवेदी, संस्कृति, कामदेव, नीलकमल, आम्रमंजरी, मदनोत्सव, गंधर्व, यक्ष, आर्य

हजारीप्रसाद द्विवेदी के साहित्य से रूबरू होने का अर्थ है सम्पूर्ण भारतीय ज्ञान, परम्परा, पाण्डित्य एवं गौरवशाली संस्कृति से संवाद कायम करना। आपके निबंधों में कहीं रामायण और महाभारत के प्रसंगों की समीक्षा की गई है तो कहीं वैदिक और बौद्ध धर्म का निरूपण किया गया है तो कहीं संत मत और योग मत का गंभीर विवेचन है। वे कहीं फलित ज्योतिष पर विचार व्यक्त करते हैं तो कहीं केश प्रक्षालन, मुख प्रक्षालन, भोजनोत्तर विनोद पर टीका टिप्पणी करते हैं। साहित्य, संस्कृति, धर्म, राजनीति, क्रीडा, विलास, प्रसाधन, प्रकृति, कला, ऋतु–उत्सव, मनोविनोद कुछ भी उनकी दृष्टि से बचा नहीं है। 'भारत वर्ष की सांस्कृतिक समस्या', 'भारतीय संस्कृति की देन', 'भारतीय फलित ज्योतिष', 'भारतीय संस्कृति के मूल स्रोत', 'जीवेम शरदः शतम', आदि द्विवेदी जी के शुद्ध सांस्कृतिक निबंध हैं।

शुद्ध सांस्कृतिक निबंधों के अतिरिक्त अपने अन्य निबंधों में भी वे अतीत की ओर झांकते हुए भारतीय संस्कृति के उद्घाटन का अवसर प्राप्त कर लेते हैं। 'अशोक के फूल', 'कुटज', 'देवदारू', 'मेरी जन्मभूमि', 'आम फिर बौरा गए' जैसे निबंधों में उन्हें जहां कहीं भी अवसर मिला; वहां इस विषय पर अपने विचार व्यक्त करने का लोभ संवरण नहीं कर पाते।

हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबंध लेखन से ही हिन्दी में ललित निबंधों की एक सशक्त शुरूआत हुई। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबंध उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति बनकर आए। संस्कृत, अपभ्रंस, अंग्रेजी, हिंदी आदि पर अधिकार होने के कारण इनकी भाषा बहुत समृद्ध है। इनकी भाषा में संस्कृत की तत्सम शब्दावली, तद्भव, देशज तथा अन्य भाषाओं के शब्दों का प्रयोग अत्यंत कुशलता से हुआ है। भाषा को गतिशील और प्रवाहपूर्ण बनाने के लिए मुहावरे और लोकोक्तियों का खुलकर प्रयोग हुआ है। इनकी भाषा में अलंकारिकता, चित्रोपमता और सजीवता जैसे गुण हैं। इन्होंने अपनी भाषा में लोकभाषा को भी स्थान दिया है। संस्कृत, बांग्ला, हिंदी की सूक्तियों और उद्धरणों का प्रचुर मात्रा में प्रयोग करते हैं। वस्तुतः इनकी भाषा की मूल प्रवृत्ति संस्कृ तनिष्ठता है जो इनके अगाध पाण्डित्य और बहुज्ञता की परिचायक है।

द्विवेदी जी के निबंधों में सभ्यता–संस्कृति के प्रति जीवन दृष्टि, जीवन के प्रति मानवतावादी धारणा, फक्कड़पन, उन्मुक्तता, मनुष्य की शक्ति और विश्वास को रेखांकित करने वाले बिन्दु हैं। द्विवेदी जी अपनी उदार सांस्कृतिक दृष्टि और सजग इतिहास बोध से अपने निबंधों में उच्चतर मानवीय मूल्यों का निर्धारण करते हैं।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के प्रमुख निबंध संकलन हैं – 'अशोक के फूल', 'कुटज', 'विचार और वितर्क', 'कल्पलता', 'आलोक पर्व', 'गतिशील चिंतन', 'हमारी साहित्यिक समस्याएं', 'साहित्य सहचर', 'प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद' आदि।

'अशोक के फूल' निबंध के माध्यम से आचार्य द्विवेदी ने भारतीय संस्कृति पर विचार किया है। द्विवेदी जी ने अपने निबंधों में कई फूलों पर विस्तार से विचार किया है। इनमें अशोक, शिरीष और कुटज प्रमुख हैं। ये फूल संस्कृति, इतिहास और परम्परा के प्रतीक हैं। द्विवेदी जी जब किसी साधारण विषय या वस्तु पर भी विचार करते हैं तो इतिहास और परंपरा में गहराई से डूब जाते हैं। वे स्मृतियों के खजाने से ऐसे–ऐसे तर्क देते हैं कि पाठक मंत्रमुग्ध हो जाता है। द्विवेदी जी के पास भारतीय संस्कृति का अगाध ज्ञान था। वे अशोक के फूलों को सामाजिक, ऐतिहासिक और साहित्यिक संदर्भों में प्रस्तुत करते हैं। लेखक जब अशोक के लाल–लाल फूलों के गुच्छों को मस्ती में झूमते देखता है तो वह उदास हो जाता है। लेखक को अशोक के फूलों का इतिहास और परंपरा याद आने लगती है। वह विचार करने लगता है कि हजारों साल पहले अशोक को जो सम्मान और प्रतिष्ठा हासिल थी; वह आज उस सिंहासन से उतार दिया गया है।

आज अशोक को लोग एक साधारण वृक्ष समझते हैं लेकिन एक समय था कि कामदेव की पूजा बिना अशोक के फूलों के नहीं हो सकती थी। माना जाता है कि कामदेव के बाण फूलों के बने होते थे। कामदेव जब अपना तीर छोड़ते हैं तो कोई आवाज नहीं होती। पांच तरह के फूलों से कामदेव ने अपने बाणों को बनाया था। इन पांच फूलों में सफेद कमल, अशोक के फूल, आम के

बौर (आम्रमंजरी), नवमल्लिका (चमेली) और नीलकमल हैं। कामदेव के पास पांच बाण हैं। इन्हें पंच बाण कहा जाता है। इन बाणों से किसी को न तो चोट पहुंचती है और न ही कोई घायल होता है। जिसको भी कामदेव के ये पांच बाण लगते हैं, उसके जीवन में प्रेम और मधुरता का संचार होता है। इनका वाहन तोता है। कामदेव का धनुष गन्ने का बना हुआ है और उसकी डोर का निर्माण शहद को सुखाकर किया गया है। लोग अपने जीवन में प्रेम और संतान सुख के लिए कामदेव की पूजा करते हैं। वसंत कामदेव का मित्र है। कामदेव को समर्पित मदनोत्सव भारत में धूमधाम से मनाया जाता था। महाराजा भोज की रचना 'सरस्वती–कंठाभरण और कालीदास के 'मालविकाग्निमित्र' में मदनोत्सव का बड़ा मनोहारी वर्णन मिलता है। द्विवेदी जी अशोक के फूल को देखकर उदास हो जाते हैं क्योंकि कामदेव के बाणों में शामिल सारे फूलों का महत्व ज्यों का त्यों बना हुआ है लेकिन अशोक के फूलों को वह महत्व हासिल नहीं हुआ। द्विवेदी जी लिखते हैं कि "जब मैं अशोक के लाल स्तबकों (गुच्छों) को देखता हूं तो मुझे वह पुराना वातावरण प्रत्यक्ष दिखाई दे जाता है।" जब से कामदेव की पूजा और मदनोत्सव की परंपरा कम हुई है। तभी से अशोक के फूलों का महत्व भी कम हो गया है। लोग कामदेव और मदनोत्सव को भी भूल गये और अशोक के फूलों को भी भूल गए। कामदेव ने लाखों–करोड़ों मनोहर फूलों को छोड़कर अशोक के फूलों को चुना था। इससे इस फूल का महत्व समझा जा सकता है। द्विवेदी जी लिखते हैं कि "दुनिया बड़ी भुलक्कड़ है। केवल उतना ही याद रखती है, जितने से उसका स्वार्थ सधता है। बाकी को फेंककर आगे बढ़ जाती है। शायद अशोक से उसका स्वार्थ नहीं सधा। क्यों उसे वह याद रखती।"

अशोक के फूल ईस्वी सन की शुरूवात से ही धर्म और साहित्य में पूरी महिमा के साथ आते हैं। भारतीय समाज को फूलों का महत्व गंधर्वों ने सिखाया। गंधर्व हिमालय प्रदेश में रहते थे। कंर्दप (कामदेव) की पूजा गंधर्व ही करते थे। आर्यीकरण की प्रक्रिया में आर्यों ने इसे अपनाया और शेष भारत में फैला दिया। इस तरह से कंर्दप देवता की आराधना अनार्यों की देन है। भारतीय संस्कृति का निर्माण कई संस्कृतियों के समावेश से हुआ है। आर्यों को जिस संस्कृति की जो भी परंपरा अच्छी लगी, उसे उदारतापूर्वक अपना लिया। द्विवेदी जी लिखते हैं कि "जिसे हम हिंदू रीति–नीति कहते हैं, वह अनेक आर्य और आर्येत्तर उपादानों का अद्भुत मिश्रण है। एक–एक पशु, एक–एक पक्षी न जाने कितनी स्मृतियों का भार लेकर हमारे सामने उपस्थित हैं। अशोक की भी अपनी स्मृति परंपरा है।"

अशोक वृक्ष की पूजा प्राचीन समय में होती थी। संतान चाहने वाली स्त्रियां चौत्र शुक्ल अष्टमी को व्रत रखती थी और अशोक की आठ पत्तियों को खाती थी। अशोक के फूल दो प्रकार के होते थे – सफेद और लाल। सफेद फूलों का प्रयोग तांत्रिक क्रियाओं में किया जाता था जबकि लाल फूलों से कामदेव की पूजा की जाती थी। हिमालय की तराई में ही गंधर्व, यक्ष और अप्सराएं रहती थी। अशोक वृक्ष की पूजा इन्हीं गंधर्वों और यक्षों की देन है।

देश में मुसलमानों के आगमन और सल्तनत की स्थापना के बाद संस्कृति में कई परिवर्तन हुए। इस परिवर्तन में अशोक को भी प्रतिष्ठा के सिंहासन से उतार दिया गया। लोग बाद में सिर्फ अशोक का नाम ही लेते रहे लेकिन उसे वह प्रतिष्ठा आज तक हासिल नहीं हुई। लेखक जब अशोक वृक्ष और उसके सुंदर फूलों से जुड़ी परंपरा को याद करता है तो वह बहुत उदास हो जाता है क्योंकि हमारा समाज अशोक को लगभग भुला चुका है।

इस निबंध के अंत में हजारीप्रसाद द्विवेदी लिखते हैं कि अशोक के फूलों को देखकर उदास होना बेकार है क्योंकि अशोक आज भी उसी मस्ती में झूम रहा है। आज भी वह उसी मौज में है जैसा कि दो हजार साल पहले था। कालीदास ने इसका आनंद अपने ढंग से लिया। मैं इसका आनंद अपने ढंग से ले रहा हूं। न तो कुछ बिगड़ा है और न ही कुछ बदला है। केवल लोगों के सोचने का ढंग बदला है। समय के साथ बदलाव होता रहता है इसलिए उदास होना व्यर्थ है।

संदर्भ

1. हजारीप्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण – 1981
2. हिन्दी गद्य साहित्य, विन्यास और विकास – रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008
3. हिन्दी गद्य साहित्य – रामचंद्र तिवारी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1971
4. हिन्दी आलोचना की बींसवी सदी – निर्मला जैन, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1986
5. साहित्य के बुनियादी सरोकार – कर्ण सिंह चौहान, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1984।